डॉ॰ संगीता राय
अतिथि शिक्षक
संस्कृत विभाग
एच॰ डी॰ जैन कॉलेज, आरा

अभिज्ञान शाकुन्तलम् के अनुसार –
दुर्वासा शाप का नाटकीय महत्व

भारतीय धर्म और दर्शन के अनुसार धर्म में जो सौन्दर्य है वही ध्रुव है और प्रेम का जो शांत तथा संयत रूप है वही श्रेष्ठ है। बन्धन में ही यथार्थ शोभा है और उच्छृंखलता में सौन्दर्य की विकृति। भारतीय शास्त्रों में नर-नारियों का संयत संबंध कठिन अनुशासन के रूप में उपदिष्ट है। वह त्याग से परिपूर्ण, दुःख से चरितार्थ धर्म से ध्रुव निश्चित है। महाकवि कालिदास को वासना-युक्त अमर्यादित प्रेम मान्य है नहीं है। उन्होंने प्रेम के आत्मिक आन्तरिक पहलु को महत्व दिया है, बाह्याकर्षण वासनामय रूप को नहीं। उनके अनुसार केवल सौन्दर्याधारित क्षणिक वासनामय प्रेम पतन की ओर उन्मुख है। परन्तु वियोग, तपस्या, कष्ट की आग में जलकर उसकी स्वार्थपरता समाप्त हो जाती है और वह कुन्दन-सदृश कर्तव्य की दीप्ति से चमक उठता है। इसी लोककल्याण की भावना से प्रेरित होकर महाकवि कालिदास अपनी कृति अभिज्ञान शाकुन्तल में आदर्श एवं उदात्त कर्तव्यनिष्ठ प्रेम का चित्रण किया है।

शकुन्तला ने आश्रम की मर्यादा को तोड़कर गान्धर्व विवाह किया। उसने क्षणिक प्रेम में उन्मत्त होकर अपने कर्तव्य का ध्यान नहीं रखा। तथापि दुर्वासा पुकारते रहे और प्रेमी के ध्यान में निमग्न रही।

कामवश ही कर्तव्य की उपेक्षा की और प्रेम के मंगल भाव को मिटा दिया। जिसका परिणाम शाप और प्रत्याख्यान के रूप में भुगतना पड़ा। दण्ड स्वरूप उसे प्रिय के वियोग से संतप्त होना पड़ा —

"विचिन्तयन्ती यमनन्यमानसा
तपोधनं वेत्सि न नामुपस्थितम्।
स्मरिष्यति त्वां न बोधितोऽपि सन्
कथां प्रमत्तः प्रथमं कृतामिव ॥

स्पष्टतः दुर्वासा शाप का पूर्वकृतक कथा प्रणय रंगभूमि में अठखेलियाँ कर रही थी परन्तु अब कर्तव्य की कठोर नियामक शृंखलाओं से ~~सब~~ जकड़ी वियोग भूमि में प्रतीक्षारत हो गयी है। संयोग से वियोग की पलटना प्रणय से कर्तव्य की ओर उन्मुख होना यही वह नयी गति है जो चतुर्थ अंक की कथावस्तु को गति प्रदान करता है तथा नाटकीय संविधान की दृष्टि से महत्त्व रखता है।

दुर्वासा शाप कालिदास की मौलिक उद्भावना है जो नाटकीय महत्त्व की दृष्टि से अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। यह नाटक में धुरि के समान है जिसके चारों ओर कथावस्तु चक्कर लगाती है और कथानक को अनेक मोड़ों पर ले जाती है। महर्षि दुर्वासा का यह शाप तीन कालों में विभक्त है — शाप, शाप की अवधि और शाप की समाप्ति। नाटक के चतुर्थ अंक में पति प्रेम में ध्यानावस्थ शकुन्तला को उसके प्रमाद के दण्डस्वरूप दुर्वासा मुनि शाप दे देते हैं और सखियों के अनुनय-विनय पर अभिज्ञान दर्शन तक उसकी अवधि निश्चित कर देते। दुर्वासा का यह शाप प्रभावपूर्ण विधि से दुष्यंत और शकुन्तला का विच्छेद करता है। परन्तु प्रश्न यह उठता है कि वे इस दण्ड के अधिकारी थे?

दुष्यंत ने प्रथम मिलन में आत्मनियंत्रण का परिचय दिया है। उसने शकुन्तला के पूर्ण विवरण को जानना चाहा है। उसने उसकी भावनाओं को पहचाना है। उसने तपस्वियों के प्रति अपने कर्तव्य का सम्पादन किया है। तब क्यों शाप इस महान राजा को पीड़ित कर रहा है।

शकुन्तला भी भोली भाली है। प्रथम मिलन के समय लज्जावसिक्ता शकुन्तला राजा से बात भी नहीं करती है। तृतीय अंक में वह अपनी भावनाओं को ~~प्रकाशित~~ प्रकाशन करती है। वह एक अनलंकृत प्रेमपत्र राजा को लिखती है वह भी जब उसकी सखियाँ उसको ऐसा करने के लिए बाध्य करती है। वह गान्धर्व विवाह के लिए भी सखियों की अनुमति की प्रतीक्षा करती है। तब फिर क्यों शाप ने शकुन्तला को भी अपने पाश में जकड़ा है।

स्पष्टतः यह कोई ईश्वरीय अलौकिक विपत्ति नहीं अपितु दुष्यंत एवं शकुन्तला की त्रुटि का ही स्वाभाविक परिणाम है।

शकुन्तला पतिप्रेम में अतिथिसत्कार रूप कर्तव्य को भूल गयी और दुष्यंत वासना के आकर्षण में कण्व की अनुमति प्राप्त करने का विवेक खो बैठा। महाकवि कालिदास को कर्तव्य की यह अवहेलना सहन नहीं हो सकती है। फलतः दुर्वासा शाप के द्वारा उन्होंने दोनों को वियोग भूमि में पहुँचा दिया। जहाँ एक दूसरे के वियोग में अनुभूतियों के मध्य दोनों का प्रेम परिपक्व हुआ और कर्तव्यनिष्ठ आदर्श को प्राप्त कर सका। इस प्रकार दुष्यंत और शकुन्तला की त्रुटियों में ही शाप के कारण ढूँढे जा सकते हैं।

दुर्वासा का शाप का इस नाटक में महत्वपूर्ण स्थान है। सर्वप्रथम इस शाप की कल्पना का महत्व प्रथम तीन अंकों में भ्रमर सदृश नायिकों के चारों तरफ मँडराते हुए नायक के चरित्र की रक्षा करने, उसे

धर्मपरायण व उच्च दिखाने में है। यदि उस शाप की कल्पना नहीं की जाती तो नायक का चरित्र निम्न धरातल पर ही कुंठित हो जाता। प्रथम तीन अंकों में से नायक का चरित्र भ्रमरतुल्य है जो केवल मधुपान सौंदर्य, प्रेमादि विलासों से परिचित है लेकिन शाप के कारण जब उसका शकुंतला से वियोग होता है तो उसके पश्चाताप के अश्रु उसके करुणामय निश्चल निःस्वार्थ ही है जो दुष्यंत को लोकापवाद से मुक्त करता है कि धर्मनिष्ठ राजा ने आपन्नसत्वा धर्मपत्नी को परित्याग कर दिया परन्तु दुर्वासा का शाप उसका रक्षक बनकर उसे बचा लेता है।

—×—